A First EPQRST Journal-www.jahnavisanskritejournal.com, Issue-17th, Vol.-V, 14.1.14

ISSN 976-8645

वैश्विक पर्यावरणीय समस्याएं एवं वेदाक्त समाधान

वन्दना यादव

कूटशब्द *छन्दस्, पुरुरूपम्, स्थविर, महद् उल्ब, द्यावा-पृथिवी*

वैदिक संहिताएं भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि हैं। इनमें सम्पूर्ण वातावरण एवं परिवेश का वर्णन सन्निहित है तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण एवं संवर्धन के बीज भी विद्यमान हैं। ऋषियों ने स्व-बुद्धिशक्ति का प्रयोग कर मनुष्य और प्रकृति के परस्पर सम्बन्धों की व्याख्या की है। प्रकृति का प्रत्येक कार्य एक स्वाभाविक और नियमित प्रणाली का श्रेष्ठ रूप है, जिसे विरुप करने का अर्थ ब्रह्माण्ड की परम सत्ता को चुनौती देना है। इस युग के मानव ने अपनी प्रगतिशील सभ्यता और संस्कृति से प्राकृतिक मर्यादाओं का अतिक्रमण कर पर्यावरण की अनेक समस्याएं सम्पूर्ण विश्व के समक्ष गम्भीर समस्या के रूप में उपस्थित हैं। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य वैदिक संहिताओं (ऋक्, यजु, साम, अथर्व) के आधार पर वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं के सन्दर्भ में मनुष्य एवं प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए वेद प्रतिबिम्बित समाधान को प्रस्तुत करना है।

आज सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण और पारिस्थितिकीय असन्तुलन की समस्या का सामना कर रहा है। इसका मुख्य कारण मनुष्य के उस भोगवादी दृष्टिकोण को माना जा रहा है, जिसमें उसने प्राकृतिक स्रोतों को स्वयं से पृथक् तथा निर्जीव मान लिया है। भोगवादी प्रवृत्ति का दुष्प्रभाव आज दो रूपों में दृष्टिगोचर हो रहा है। प्रथम विकास के नाम पर प्रकृति का अन्धाधुन्ध दोहन व शोषण तथा द्वितीय सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास। प्रकृति के सहज सामीप्य से दूर हुए, आत्मीय भाव से वंचित असंवेदनशील मानव ने अपनी स्वार्थलिप्सा के लिए इस सीमा तक प्रकृति का दोहन किया है कि प्रकृति भीआज प्रतिवाद की स्थिति में आ गयी है। स्वच्छ, सुन्दर और प्रदूषण रहित पर्यावरण में ही उदात्त तथा उत्कृष्ट विचारों का उद्भव तथा विकास सम्भव है इसलिए वैदिक ऋचाओं तथा मन्त्रों का प्रथम लक्ष्य पवित्र तथा शुद्ध पर्यावरण का निमार्ण तथा संरक्षण रहा है। चारों वेद पर्यावरण चेतना के संवाहक हैं।

ISSN 976-8645

आधुनिक मानव भौतिक प्रगति के उच्चतम सोपान को संस्पर्श करने की लालसा में प्राकृतिक मर्यादाओं का निरन्तर अतिक्रमण करता जा रहा है। आज प्रकृति का प्रकोप भूकम्प, महामाही, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, हरितगृह प्रभाव, जैव विविधता क्षय, फैलते रेगिस्तान व सिकुड़ते वन आदि के रूप में प्रकट हो रहा है। पौधों और जीव जन्तुओं की प्रजातियां प्रतिदिन समाप्त होती जा रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण से मनुष्यों एवं जीव-जन्तुओं में नये संक्रामक रोग, मस्तिष्क असन्तुलन, मनोविकार, कैंसर और विभिन्न प्रकार के रोगों का प्रसार रहो रहा है। पर्यावरणीय असन्तुलन तेजी से होने के कारण भूमण्डलीय संकट वैदिक ऋषियों ने मानव के मानसिक को पर्यावरण का अभिन्न अंग स्वीकर करते हुए मानव मन की शुद्धता की कामना की है। मानव के आन्तरिक भाव एवं विचार समस्त पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। यजुर्वेद में मन को शुभ विचारों से युक्त होने की कामना की गयी है-

''यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।''[21]

पृथिवी एवं प्रकृति को जीवित मानने वाले लोग मातृभाव से युक्त होकर उसकी एवं उसके अन्तर्गत आने वाली सभी वस्तुओं की सुरक्षा का उपाय करते हैं। ठीक इसके विपरीत इसको मृत मानने वाले लोगों का व्यवहार केवल उसके उपभोग पर आधारित होता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पृथिवी के प्रति दृष्टिकोण (जीवित या मृत सम्बन्धी) भेद से व्यवहार में भेद होता है। प्रकृति के प्रतिकार के परिणामस्वरूप वर्तमान समय में लोगों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता उत्पन्न हो रही है। पर्यावरणीय समस्याओं का प्रमुख कारण स्वार्थी औद्योगिक उपलब्धियां प्राप्त करना है।

आज प्रत्येक स्तर पर पर्यावरण को पाठ्यक्रम का विषय बनाया जा रहा है इसलिए यह आवश्यक है कि संस्कृत वाङ्मय के उन स्थलों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाए, जिनमें पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी शिक्षा दी गयी है। पर्यावरण संरक्षण हेतु एक समग्र जीवन दर्शन की आवश्यकता है। औद्यौगिक विकास को अवरुद्ध करने की नहीं अपितु इसके मूल में प्रवहमान एकांगी विचारधारा में परिवर्तन की अपेक्षा है। एकांगी दृष्टिकोण में मानव को प्रकृति के अनुसार जीवन जीने की कदापि आवश्यकता नहीं है अपितु वैज्ञानिक व औद्यौगिक क्रान्ति के द्वारा मानव इच्छानुसार प्रकृति का उपभोग कर सकता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार मानव और प्रकृति में उपभोक्ता-आपूर्तिकर्ता सम्बन्ध है जिसमें मानव प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के लिए संघर्षरत रहात है एवं मनुष्य अपना परम उद्देश्य प्रकृति पर आधिपत्य स्थापित करना मानता है। दूसरी तरफ वैदिक चिन्तन में प्रकृति का अनुसरण करके ही मनुष्य अनुकूल जीवनयापन करने में समक्ष है।

ISSN 976-8645

विकसित एवं विकासशील देश पर्यावरण संरक्षण प्रयोजनार्थ प्रचुर धन व्यय कर रहे हैं। पृथिवी सम्मेलन जैसे अन्ताराष्ट्रिय आयोजन किये जा रहे हैं। विभिन्न देश पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण हेतु स्वतंत्र मन्त्रालय स्थापित कर रहे हैं। अभिनव अनुसंधान किये जा रहे हैं, ये समग्र प्रयास एवं आधुनिक विज्ञान पर्यावरणीय समस्याओं का निराकरण नहीं कर सके हैं। ऐसी विकट स्थिति में इन असमाधेय समस्याओं के समाधान हेतु वैदिक संहिताओं का विशिष्ट परिशीलन अतिप्रासंगिक है। 1972 ई. में स्ट्रॉकहोम में आयोजित सम्मेलन के पश्चात् आधुनिक वैज्ञानिकों का ध्यान पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकीय असन्तुलन की और आकृष्ट हुआ, किन्तु तत्त्वद्रष्टा ऋषियों ने सहस्राब्दियों पूर्व इस संकट की कल्पना कर ली थी और पर्यावरण संरक्षण हेतु अनेक उपाय भी प्रस्तुत किये। वर्तमान में विभिन्न देशों की सरकार UNEP, GEF इत्यादि कार्यक्रमों के माध्यम से इन पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान हेतु प्रयासरत हैं। समय-समय पर विभिन्न पर्यावरण सम्बन्धी राष्ट्रिय एवं आन्ताराष्ट्रिय सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है। जिनको मानवीय जीवन एवं वैज्ञानिक संकल्पना हेतु अपनाने पर एक स्वस्थ एवं आदर्श पर्यावरण का निर्माण किया जाना संभव है।

मनुष्य और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं, इसलिए वेदों में वनस्पतियां, नदियां आदि पूजनीय कही गयी हैं। मनुष्य का प्रत्येक व्यवहार हर प्रकार से पर्यावरण के घटकों को प्रभावित करता है। जब मानव प्राकृतिक स्वरूप को कृत्रिम रूप देने लगता है तो पर्यावरण और मनुष्य एक दूसरे के विरोधी हो जाते हैं और पर्यावरण की समस्या का सूत्रपात हो जाता है। वर्तमान मानव यहीं कर रहा है। अथर्ववेद में कहा गया है जो मनुष्य दुष्ट भाव से युक्त होकर अन्य के चित्त का छिपकर नाश करता है वह वध करने योग्य है।[4] ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण वातावरण स्वयं में सन्तुलित एवं सामञ्जस्यपूर्ण है। यह सन्तुलन पर्यावरण की शुद्धता पर अवलम्बित है। शुद्ध पर्यावरण सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को समृद्धि प्रदान करता है। मूल रूप से पर्यावरण में किसी प्रकार का कोई प्रदूषण और असन्तुलन नहीं है। मानवीय महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य की विवेकहीन गति ही पर्यावरण प्रदूषण और पारिस्थितिकीय असन्तुलन का प्रमुख कारण है। मानव की समस्त क्रियाओं का प्रभाव पर्यावरण पर नियमित रूप से होता है। पर्यावरण पर विजय प्राप्त करने की लालसा ने मानव को शाश्वत वेद ज्ञान के विपरीत अपने मीमित ज्ञान के आधार पर व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया है। मानव का वेदों से असंगत यही व्यवहार पयार्ववरण प्रदूषण का प्रमुख कारण बन गया है।

ISSN 976-8645

पृथिवी, जल, वायु तथा आकाश आदि की शुद्धि एवं इनको प्रदूषण से बचाने का उल्लेख वैदिक मन्त्रों में किया गया है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में पर्यावरण के तीन संघटक तत्त्वों में जल, वायु व औषधियों को शामिल करते हुए इन्हें 'छन्दस्' एवं 'पुरुरूपम्' कहा गया है-

''त्रीणि छन्दांसि कवयो वि योतिरे पुरुरूपं दर्शतं विश्वचक्षणम्।
आपो वाता ओषधयस्तान्येकस्मिन्भुवन आर्पितानि।।''[5]

ऋग्वेद में ग्यारह पर्यावरण शोधक तत्वों का वर्णन मिलता है-द्यावापृथिवी, जल, औषधियां, वायु, मेघ, नदी, वन, पर्वत, सूर्य, उषा और अग्नि।[6] अथर्ववेद में भी पर्यावरण शोधक तत्वों में पर्वत, जल, वायु, पर्जन्य और अग्नि का अंकल किया गया है, जिनसे प्रदूषण नष्ट होता है।

''ये पर्वताः सोमपृष्ठा आपः उत्तानशीवरीः।
वातः पर्जन्य आदग्निस्ते ऋव्यादमशीशमन्।।''[7]

पर्यावरण के संघटकों में वायु तत्त्व का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वायु हमारी जीवनी शक्ति है परन्तु अब शहरीकरण व औद्योगीकरण के कारण वायुमण्डल में निरन्तर आक्सीजन की कमी हो रही है। वायु प्रदूषण को दूर करने में वृक्षों की भूमिका अग्रगण्य है क्योंकि ऑक्सीजन छोड़ते हैं व कार्बन-डाई-आक्साइड ग्रहण करते हैं। वेदों में इन्हें काटने का निषेध किया गया है-

''मा काकम्बीरमुद्वृहो वनस्पतिमशस्तीर्वि हि नीनशः।''[8]

''ओषध्यास्ते मूलं मा हिंसीतम्।''[9]

वैदिक ऋषियों ने वायु शुद्धि पर विशेष बल दिया है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि हे वायु! तुम्हारे पास अमृत की निधि है, उससे तुम हमें शक्ति दो-

''यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः।
ततो नो देहि जीवसे।।''[10]

वायु के अमृतत्व को नष्ट न होने देने की तरफ भी ध्यान आकर्षित किया गया है।

पर्यावरण का अन्य अंग जल न केवल मानव जाति के लिए अपितु समस्त जीवधारियों के लिए जीवनदायक तत्त्व है। वैदिक काल से ही भारतीय मनीषी जल संवर्धन एवं जल-संरक्षण हेतु सजग रहकर यज्ञ जैसी वैज्ञानिक पद्धति को अंगीकार कर वृक्षों एवं वनों को लगाने का निर्देश देते हैं। परन्तु मनुष्य द्वारा निरन्तर इनकी उपेक्षा करने के कारण आज विश्व के समक्ष पेयजल संकट उत्पन्न हो गया है। वैदिक ऋषि ने जल की महत्ता को स्वीकार करते हुए जल को जीवन, अमृत, रोगनाशक और आयुवर्धक बताया है-

ISSN 976-8645

''अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्।''[11]

जल को माता की भांति हितकारी बताया है–''आपो अस्मान्मातर: सूदयन्तु घृतेन नो घृतप्व: पुनन्तु।''[12]

परन्तु वर्तमान में पवित्र नदियां कचरे ढोने का साधन मात्र रह गयी हैं। कारखानों का अपशिष्ट एवं मल–मूत्र इत्यादि इनमें विसर्जित कर दिया जाता है, जिससे इनका स्वरूप ही परिवर्तित हो गया है। वैदिक काल में मन्त्रदृष्टा ऋषियों ने भूमि संरक्षण के प्रति भी ध्यान आकर्षित किया जिसका उल्लेख वैदिक ऋचाओं में मिलना है। मानव जीवन के लिए पृथिवी की महत्ता को स्वीकार करते हुए अथर्ववेद में कहा गया है–''माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:''[13]

वेदों में भूमि के संरक्षण के सम्बन्ध में यह उल्लेख मिलता है कि पृथिवी के जिस भाग का खनन किया जाए उसे पुन: पूरित कर दें, पृथिवी को किसी भी दशा में क्षति न पहुचायें–

''यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।''[14]

पृथिवी के अन्दर कोयला, पैट्रोल, गैस व तेल आदि विद्यमान हैं जब उनका खनन होता है तो पृथिवी का सन्तुलन बिगडता है परिणामस्वरूप भूकम्प, भूक्षरण, भूमि का धंसना इत्यादि त्रासदी का सामना करना पड़ता है। अत: रिक्त भू–भाग को तत्काल पूर्ण कर देना चाहिए। ऋग्वेद एवं यजुर्वेद में यह कथन है कि पृथिवी को प्रदूषित न करें अन्यथा समुद्र का जलस्तर बढ़ जाएगा एवं पृथिवी का भाग जलमग्न हो जाएगा–

''मा नो माता पृथिवी दुर्मतौ धात्''[15]

''मा त्वा समुद्र उद्वधीत्''[16]

''पृथिवी मातर्मा हिंसी: मो अहं त्वाम्''[17]

ओजोन परत जो पृथिवी की रक्षा कवच है, इ पर भी वेदों में उल्लेख प्राप्त होता है। वेदों में ओजोन परत के लिए 'महत् उल्ब' शब्द का प्रयोग होता है तथा इसे 'स्थविर' अर्थात् स्थूल परत कहा गया है–

''महत्त्दुल्बं स्थविरं तदासीद्येनाविष्टित: प्रविवेशिथाप:।''[18]

ओजोन परत सूर्य की पराबैंगनी किरणों का अवशोषण कर मानव जीवन तथा पृथिवी की उन प्रबल तथा शाकितशाली संहारक किरणों से रक्षा करती है, जो किरणें मानव जीवन तथा प्रकृति

ISSN 976-8645

के लिए अत्यन्त घातक होती हैं। आज ओजोन परत का क्षरण 'क्लोरोफ्लोरोकार्बन' जैसी रासायनिक गैसों के कारण तीव्र गति से हो रहा है। इस गैस की अधिक मात्रा वायुमण्डल में पहुंचने से ओजोन परत क्षतिग्रस्त होती है परिणामस्वरूप तापमान में वृद्धि,अत्यधिक वर्षा, ग्लेशियर के पिघलने जैसी प्राकृतिक आपदाएं बढ़ जाती हैं। पराबैंगनी किरणों का मानव शरीर पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। ध्वनि प्रदूषण के निवारण के सन्दर्भ में वेदों में महत्त्वपूर्ण चिन्तन प्राप्त होता है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद से प्राप्त उल्लेख के अनुसार 'मौन धारण' से वातावरण में शान्ति का संचार होता है तथा मधुर वचन से मानव का चित्त प्रसन्न होता है।

''उन्मदिता मौनयेनं वातां आ तस्थिमा वयम्।''[19]

''मधुजन्मे निष्क्रमणं मधुमन्मे परायणम्। वाचा वदामि मधुमद्भूयासं मधुसन्दृश।।''[20]

उत्पन्न हो गया है। असन्तुलित पारिस्थितिकीय तन्त्र ने ब्रह्माण्ड के सामने महान संकट उपस्थित कर दिया है। प्रत्येक राष्ट्र इस भयंकर समस्या का समाधान खोजने में प्रयासरत है। पर्यावरण संकट की वर्तमान विपद् वेला में प्रकृति के प्रति जिन विचारगत एवं व्यवहारगत सुधारों की आवश्यकता पर सम्पूर्ण विश्व चिन्तातुर होकर ध्यान दे रहा है, वे वेदों में चरितार्थ हुए हैं। अत: इनका अध्ययन प्रासंगिक है।

प्रारम्भ से ही भारतीय परम्परा मं वैश्विक दृष्टिकोण को अपनाया गया है तथा प्रकृति को केवल भोग्या न समझकर उसके साथ मातृवत् व्यवहार किया गया है, क्योंकि समस्त जगत् एक ही परमतत्त्व की अभिव्यक्ति मात्र है।

''यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व। तद् ब्रहोति।''[1]

अत: वह मुख्य कारण चेतन है तो उसके कार्य अचेतन नहीं हो सकते-

''वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।

तस्मिन्निदं सं च वि चैति सर्वं स ओतः प्रोतश्च विभुः प्रजासु।।''[2]

वर्तमान समय में प्रकृति के प्रति अचेतन सम्बन्धी विचारों के कारण मातृवत् व्यवहार की अपेक्षा उसका मनचाहा उपभोग किया जाने लगा तथा प्रकृति पर विजय पाना ही एकमात्र लक्ष्य समझा जाने लगा। मनुष्य की भोगवादी दृष्टि के कारण जलवायु में अनपेक्षित रूप से परिवर्तन हो रहा है। कहीं पर सूखा तो कहीं पर तूफान और घनघोर वर्षा की स्थिति उत्पन्न हो रही है। तापवृद्धि

ISSN 976-8645

होने की स्थिति में कीटनाशकों का दुष्प्रभाव कृषि पर व्यापक रूप से पड़ रहा है जो फसल उत्पादन को भी प्रभावित करता है। परिणामत: अनेक प्राणियों का जीवन संकटापन्न है। स्वयं मानव भी अनेक असाध्य रोगों तथा भावी संतानों तक पहुँचने वाली आधि-व्याधियों से ग्रस्त हो गया है। अपनी भावी पीढ़ी के लिए वह धरती पर ऊर्जा का कौन सा साधन छोड़ सकेगा? श्वसन क्रिया के लिए कैसी वायु और प्यास बुझाने के लिए कैसा जल वह अपने उत्तराधिकारी को सौंपेगा? यह पर्यावरण संकट पृथिवी पर मानव जाति के वर्तमान ही नहीं भविष्य को भी विपन्न विकलांग बना देगा। अत: जिस मनुष्य की सुख सुविधाओं के लिए प्रकृति को दाव पर लगाया गया आज उसी मनुष्य का अस्तित्व खतरे में है। भारतीय परम्परा में पृथिवी को वैदिक समय से ही माता माना गया है एवं स्वयं को उसकी सन्तति तथा त्यागपूर्वक उपभोग के विचार को दढ़ किया गया है। द्यावा-पृथिवी को जीवित सत्ता के रूप में मन्त्र में आह्वान किया गया है-

''द्यौश्च न: पृथिवी प्रचेतस ऋतावरी रक्षतामंहसो रिष: ।।''[3]

विशाल हृदय वाले द्यावा-पृथिवी हमें सभी पापों से सरंक्षित करें। यहां द्यावा-पृथिवी को चेतन माना गया है। इस प्रकार आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक संकल्पना सम्बन्धी विचार वेदों में भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं। जलवायु परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए गठित अन्ताराष्ट्रिय आईपीसीसी के अनुसार अधिकांश वैज्ञानिक इस बात से सहमत हैं कि मानवीय गतिविधियां ही ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ा रही हैं। इसी प्रश्न पर संयुक्त राष्ट्र की देखरेख में तैयार किया गया 'क्योटो-प्रोटोकोल' मनुष्य द्वारा पर्यावरण के हित में लिया गया निर्णय है जिसके द्वारा प्रमुख ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन पर रोक लगाये जाने का प्रावधान है।

पर्यावरण की समस्या स्थानीय नहीं अपितु वैश्विक समस्या है, फलत: 'संरक्षण' सम्पूर्ण विश्व के समक्ष एक प्रश्न बन गया है। पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता व जागरूकता विकसित करना, पर्यावरण में सन्तुलन बनाये रखना एवं प्रदूषण की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना वर्तमान की सबसे बडी आवश्यकता है। इस आवश्यकता की सम्पूर्ति वैदिक वैश्विक दृष्टि द्वारा की जा सकती है क्योंकि विचार एवं शिक्षा परिवर्तन एवं सुधार का सशक्त माध्यम है। इसके अन्तर्गत पर्यावरण के विविध पक्षों, इसके घटकों, मानव के साथ अन्त: सम्बन्धों, पारिस्थितिकी तन्त्र, प्रदूषण विकास, नगरीकरण, जनसंख्या का पर्यावरण पर प्रभाव इत्यादि का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। पर्यावरण के सन्दर्भ में वैदिक चिन्तन का मूल उद्देश्य मानव-पर्यावरण के अन्त:सम्बन्धों की व्याख्या करना तथा उन सम्पूर्ण घटकों का विवेचन करना है जो पृथिवी पर जीवन को परिचालित करते हैं।

ISSN 976-8645

इनमें मात्र मानव जीवन ही नहीं अपितु जीव-जन्तु एवं वनस्पतियां भी सम्मिलित हैं। मानव सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव-पर्यावरण के समानुकूलन एवं सामञ्जस्य का परिणाम है। आज जब समस्त विश्व पर्यावरण की वर्तमान एवं भविष्यकालिक समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास कर रहा है तब वेदों में प्रतिबिम्बित वैश्विक पर्यावरणीय चिन्तन को समझने का प्रयास प्रासंगित है।

अन्तटिप्पणी

1. अथर्ववेद 1/34/3
2. यजुर्वेद 34/3
3. अथर्ववेद 7/77/2
4. वही. 18/1/17
5. ऋग्वेद 10/35/8, 64/8, 66/9-10
6. अथर्ववेद 3/21/10
7. ऋग्वेद 6/48/17
8. यजुर्वेद 1/25
9. ऋग्वेद 6/186/3
10. वही 1/23/19
11. अथर्ववेद 6/51/2
12. वही. 12/1/12
13. अथर्ववेद, 12/1/35
14. ऋग्वेद 5/43/15
15. यजुर्वेद 13/16
16. वही, 10/23
17. ऋग्वेद 10/51/1
18. वही, 10/136/3

ISSN 976-8645

19. तैत्तिरीयोपनिषद् 3/1/1
20. यजुर्वेद 32/8
21. ऋग्वेद 10/36/2

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. अथर्ववेद संहिता, डॉ. रघुवीर, सरस्वती विहार, लाहौर, 1993 (वि. सं.)
2. अथर्ववेद संहिता, श्रीपाददामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, औंध, सताता, 1995 (वि. सं.)
3. अथर्ववेद संहित (सुबोध भाष्य), भा. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी (सूरत), 1958
4. ऋग्वेद संहिता (जयदेव भाष्य), आर्य साहित्य मण्डल, वाराणसी
5. यजुर्वेद संहिता (दयानंद भाष्य), वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, 1929
6. ईशादि नौ उपनिषद्, गीता प्रेस गोरखपुर, सं. 2067